सच्चर, मिश्रा, हर्षमन्दर, फिर भी बजट ख़ामोश....

और हमारी उदासीनता

डा. सैयद ज़फ़र महमूद

देश का वार्षिक बजट इस बात का मानक होता है कि सरकार किस मुद्दे को कितना महत्तव देती है। बजट एक तरह से वित्तीय वर्ष का प्राक्कथन होता है। वर्तमान वित्त मंत्री ने संसद में 2012-13 के लिए जो बजट प्रस्तुत किया है उसमें मुसलमानों तथा अन्य अल्पसंख्यकों का अपेक्षित वर्णन नहीं है। जिस से यह अभिव्यक्त होता है कि वर्तमान केन्द्र सरकार को 2012-13 की अवधि में मुसलमानों तथा अन्य अल्पसंख्यकों के लिए कुछ ख़ास नहीं करना है। सम्भवतः इस की वजह यह हो सकती है कि इस बीच कोई महत्तवपूर्ण चुनाव प्रक्रिया नहीं होनी है। वरना पिछले दिनों जब कई राज्यों में विधान सभाओं के चुनाव होने थे तो मुसलमानों के कल्याण के लिए कितनी प्रतिबद्धता जताई जा रही थी। कुछ ही हफ़्तों मे लगता है कि जैसे वायदों की सुनामी पर ब्रेक लग गया, बल्कि गाडी बैक गेयर में चलने लगी है। दिसम्बर 2011 में मंत्रीगण मुस्लिम नेताओं के साथ मंत्रणाएं कर रहे थे कि मुसलमानों के लिए तथा अन्य अल्पसंख्यकों के लिए नए वित्तीय वर्ष में और आगामी पंच-वर्षीय योजना में क्या क्या प्रावधान किए जाएं। लेकिन बजट तैयार होने से पहले राज्य विधानसभाओं के चुनाव हो चुके थे। इस लिए मुसलमान अचानक नज़रों से ओझल हो गए। एक महत्तवपूर्ण पार्टी के नैतृत्व ने तो फिर भी सार्वजनिक रूप से स्वीकार कर लिया कि उनकी पार्टी चुनाव इस लिए हार गयी कि मुसलमानों ने उन्हें वोट नहीं दिए। लेकिन किसी और तरफ़ से तो इस तथ्य को स्वीकार करने का साहस नहीं दिखाया गया। बल्कि इसके विपरीत चिंतन बैठकों में यही माना गया कि संगठन की कमज़ोरी की वजह से चुनाव में प्रदर्शन अच्छा नहीं रहा। वास्तव में मुसलमानों का वोट न मिलने की बात स्वीकार करने के लिए एक राजनीतिक नैतिकता की ज़रूरत है।

चालू वित्तीय वर्ष के बजट में अनुसूचित जातियों के लिए लगातार दूसरे साल अलग उप-योजना देकर उनके लिए आवंटित राशि में 18 प्रतिशत वृद्धि का प्रस्ताव है और अब उनके लिए यह राशि बढ़ कर 37,113 करोड़ रु. हो जाएगी और हमें यह ख़ूब मालूम है कि अनुसूचित जाति की परिभाषा में से मुसलमानों व ईसाइयों को एक साज़िश के अन्तर्गत बिल्कुल असंवैधानिक रूप से

1950 में ही निकाल दिया गया था। इधर बजट में मुसलमानों व ईसाइयों के लिए पूरी तरह ख़ामोशी है। हालांकि पूर्व आई ए एस अधिकारी हर्षमन्दर के संगठन सेण्टर फ़ार इक्यूइटी स्टडीज़ (Centre for Equity Studies) ने 2011 की अपनी सर्वे रिपोर्ट "वायदे जो पूरे होना बाक़ी हैं" (Promises to Keep) में व्यापक तथ्यों और तर्कों के साथ लिखा है कि सच्चर कमेटी रिपोर्ट पर अमल होने की विधि यही है कि मुसलमानों के लिए राष्ट्रीय बजट में उप-योजना (Budget Sub-Plan for Muslims) आवंटित की जाए। इस महत्तवपूर्ण रिपोर्ट को अल्पसंख्यक मामलों के केन्द्रीय राज्य मंत्री ने संसद में बयान देकर केवल इस आधार पर रद्द कर दिया कि उस में दिए गए आंकड़ों में कुछ साधारण त्रुटियां हैं। इस से क्या समझा जाए? लघु व्यापार को बढ़ावा देने के लिए बजट में सरकार ने प्रस्ताव रखा है कि मंत्रालय और सार्वजनिक क्षेत्र की कम्पनियां अपनी कुल ख़रीद का पांचवां भाग लघु स्तर पर व्यापार करने वालों से ही पूरा करें। इस का भी चार प्रतिशत अनुसूचित जातियों से ख़रीदा जाए। लेकिन एसा कोई प्लान मुसलमानों या ईसाइयों के लिए नहीं बनाया गया है। इन समुदायों के विरुद्ध धार्मिक बैर बढ़ता ही जा रहा है।

सच्चर समिति ने सिफ़ारिश की थी जो लोग इस बात का ख़्याल रखें कि उनके कारोबार से, उनके द्वारा संचालित संस्थाओं से या उनके द्वारा बनाए जा रहे आवासों में हर धर्म को मानने वालों को आबादी में उनके अनुपात के अनुरूप लाभ पहुंचता रहे तो एसे लोगों को सरकार विशेष रिआयतों (Incentive Based on Diversity Index) का प्रावधान करे। इस सम्बंध में बनाई गयी विशेषज्ञ समिति ने भी अपनी रिपोर्ट तीन साल पहले पेश कर दी थी। लेकिन यूपीए सरकार ने अपने सातवें बजट में भी इस स्कीम का कोई ज़िक्र नहीं किया और न ही इसके लिए कोई राशि आवंटित की। सच्चर कमेटी ने कहा था राष्ट्रीय स्तर पर वक़्फ़ डेवलप्मेण्ट कार्पोरिशन बनाया जाए। सच्चर समित की रिपोर्ट पेश होने और सरकार द्वारा उसकी स्वीकृति के बाद से अब तक यूपीए सरकार अपने छः बजट पेश कर चुकी है और अब आगे भी वक़्फ़ डेवल्पमेण्ट कार्पोरिशन का मुद्दा सरकार की प्राथमिकताओं से परे है। पिछले साल के बजट में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के नए कैम्पसों के लिए राशि आवंटित की गयी थी लेकिन वह काम भी अभी तक मुकम्मल नहीं हो सका। लेकिन देखने वाली बात यह है कि पिछले साल की आवंटित राशि तो उपयोग में न आने की वजह से वापिस हो ही गयी, अब चालू वित्तीय वर्ष मे तो इस का कोई ज़िक्र ही नहीं है।

रंगनाथ मिश्रा कमीशन ने सिफ़ारिश की थी कि एसी तमाम सरकारी स्कीमों में जिन से रोज़गार को बढ़ावा मिलता है, अल्पसंख्यकों के लिए पन्द्रह प्रतिशत राशित आंटित की जाए जिस में से दो तिहाई केवल मुसलमानों के लिए होनी चाहिए। इसके बाद से पांचवां बजट पेश हो चुका है लेकिन इस माक़ूल सिफ़ारिश पर अमल अब भी नदारद है। मिश्रा कमीशन ने यह भी कहा था कि अल्पसंख्यकों के कल्याण के लिए प्रधानमंत्री के पन्द्रह सूत्रीय कार्यक्रम को क़ानूनी दर्जा दिया जाए और उसके क्रियान्वन को न्यायलय के समक्ष उत्तारदायी बनाकर सुनिश्चित किया जाए। इस दिशा में भी अभी तक कोई प्रगति नहीं हुई है। मिश्रा कमीशन ने कहा था कि अल्पसंख्यकों को बिना रुकावट क़र्ज़ उपलब्ध कराने के उद्देश्य से राष्ट्रीयकृत बैंकों की एक सहकारिता समिति गठित की जाए। इस उपयोगी सुझाव को भी अब तक के पांच बजटों में जगह नहीं मिल सकी। मिश्रा कमीशन ने कहा कि केन्द्र और राज्य स्तर पर समस्त सरकारी आयोगों, परिषदों, समितियों और निगमों में मुसलमानों व अन्य अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्यों को रखा जाए और अध्यक्ष के पद पर सभी धर्मों के प्रतिनिधियों को क्रमवार नियुक्त किया जाए। लेकिन एसा कुछ भी होता दिखाई नहीं दे रहा है। इसके विपरीत सरकार यह दर्शाती है कि मुसलमानों का अधिकार केवल उन पदों तक ही सीमित है जो विशेष रूप से उनके मामलों से सम्बंधित हों या जहां मुसलमान का मुखौटा लगाने की आवश्यकता हो। लेकिन यह सवाल हमें अपने आप से करना चाहिए कि हम भी केवल कुछ ख़ास पदों की परिक्रमा में क्यों रहें। हम अपना अधिकार उन पदों पर क्यों न जताएं जो सार्वजनिक हैं। हमें क्यों न बनाया जाए वित्त-सचिव, योजना आयोग का अध्यक्ष, रिज़र्व बैंक का गवर्नर, राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार, दिल्ली का उप-राज्यपाल, दिल्ली का पुलिस आयुक्त, आई. बी. का मुखिया, स्कोप (Standing Committee on Public Enterprises) का अध्यक्ष, एअर इण्डिया का अध्यक्ष आदि। इन पदों के लिए मुसलमानों को स्थायी रूप से अप्रिय व्यक्ति (Personanongrata) की श्रेणी में क्यों रख दिया गया है।

हाल-फ़िलहाल में आयोजित राज्य विधानसभाओं के चुनाव की घोषणा से दो दिन पहले केन्द्र सरकार ने आदेश जारी किया कि सरकारी नियुक्तियों में 27 प्रतिशत अन्य पिछड़ा वर्ग आरक्षण के अन्तर्गत अल्पसंख्यकों के लिए 4.5 प्रतिशत उप-कोटा होगा। मिश्रा कमीशन ने यह भी कहा था कि चूंकि सभी अल्पसंख्यकों में मुसलमानों का अनुपात 73 प्रतिशत है इस लिए इस उप-कोटा में उनके लिए सापेक्ष दो तिहाई भाग निर्धारित किया जाए, लेकिन सरकार के उपरोक्त आदेश में इसका अनुपालन नहीं किया गया। यहां यह बात याद रखने की है कि अल्पसंख्यकों में

सिख सुदाय भी शामिल है जिसे अनुसूचित जाति की श्रेणी में आरक्षण का फ़ायदा पहले से ही मिल रहा है। इसके अतिरिक्त सिख और जैन समुदाय के लोग वैसे भी सरकारी पदों पर अपनी आबादी के अनुपात से कहीं अधिक प्रतिशत संख्या में आसीन चले आ रहे हैं। इसके बावजूद सरकार ने मिश्रा कमीशन के सुझाव पर अमल नहीं किया और 2011 के तुच्छ उप-कोटा में भी मुसलमानों को उनका जायज़ हक़ नहीं दिया।

यहां मिल्लत के लिए भी सोचने का मुक़ाम है। जो लोग व्यक्तिगत हितों के लिए सक्रिय रहते हैं उन्हें अगर कहीं सरकारी, अर्द्ध सरकारी या स्वायत्तशासी पद मिल रहा हो तो बेशक उसे ग्रहण कर ले और एसे पदों के लिए प्रयासरत भी रहे, लेकिन व्यक्तिगत हितों की चाह वाले एसे लोग तो वास्तव में एक प्रतिशत से भी कम ही हैं। शेष 99 प्रतिशत लोग तो मिल्लत के कल्याण के लिए सक्रिय हो सकते हैं। और उन्हें सरकार के समक्ष साफ़ बात कहने से कोई हिचक तो नहीं होनी चाहिए। और यह भी ठीक नहीं है कि केवल चुनाव में वोट देने तक अपनी भूमिका सीमित रखी जाए। हमें अल्लामा इक़बाल का यह मिस्रा याद रखना चाहिए कि "जुंबिश से है ज़िन्दगी जहां की"। उनसे ही यह प्रेरणा भी हमें लेना चाहिए कि हमें सीपी में बन्द नहीं रहना है बल्कि हमें तो दरिया की लहरों में वह बूंद बनना है जिस से दरिया का दिल डोलता रहे। मिल्लत के अधिक से अधिक लोगों को मैदान में उतरना होगा। ख़ास कर एसे लोग जो सर्विस या बिज़नेस से सेवानिवृत हो गए हों उन्हें अपनी ज़िम्मेदारी महसूस करनी चाहिए। उन्हें अल्लाह ने योग्यता दी, अनुभव दिया, स्वास्थ दिया, एक शान्तिपूर्ण सम्मानित जीवन दिया, उनके बच्चों को बहतरीन अवसर दिए, उनके बच्चों के घर भी आबाद हो गए। यह सब करने के बाद भी उनके शरीर में शक्ति है, उनका मस्तिष्क चाक़ चौबन्द है। इस सब के होते हुए भी अगर वह अपने आपको मिल्लत की सेवा में न लगाएं तो यह साफ़ तौर से अल्लाह की नाशुक्री है। आईए जावेद क़मर के इस शेअर से रोशनी हासिल करेः-

होश इन तुन्द हवाओं के ठिकाने लग जाएं

हम चिराग अपने लहू से जो जलाने लग जाएं